हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे

मै कौन? मै कौन? मै कौन? कोई नया प्रश्न नहीं बहुत जाना माना प्रश्न है। ये प्रश्न उन्होने अपने आप से किया जो चिन्तक कहलाये सन्त कहलाये, ऋषि अथवा स्वामी कहलाये। जो अध्यात्म जगत में घुसने की पिपासा लिये थे। ये प्रश्न अब तक उनका था। यहाँ यह प्रश्न उत्तर के रुप में उन्होने उभारा है जिन्हे अपने प्यारे ग्रह, पृथ्वी ग्रह से प्यार है। उनकी ये अन्दर की आवाज ''हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे'' हम भूलोक वासियो को क्या संदेश देना चाहती है।

आज संसार मे हर प्राणी की अपनी पहचान है। यहाँ विशेषतः मनुष्य प्राणी के संदर्भ में जब हम इस बात पर विशेष दृष्टि डालते है तो पाते है हर मनुष्य की अपनी पहचान है। मनुष्य की पहचान कई रुपो में होती है। कई बार लिंग के रुप मे स्त्री अथवा पुरुष के रुप में जाने जाते है। कई बार आयु की दृष्टि से हमें बाल, युवा, प्रौढ़ अथवा बृद्ध कहा जाता है। हम अपने देश अथवा संस्कृति के रुप मे भी अलग से जाने जाते है। भारतीय होना हर कोई अपना गर्व समझता है क्योंकि भारत पृथ्वी का वह भू -भाग है जो कालान्तर में देव भूमि था। जमुना नदी के कण्ठे पर देवी देवताओं के महल थे। भारत की संस्कृति को विश्व की सभी संस्कृतियों मे सबसे समृद्ध माना जाता है। क्योंकि हमारी संस्कृति का मूल मंत्र है बहुजन हितायः बहुजन सुखाय। वसुधैव कुटुम्बकम की भावना भारत की विराट संस्कृति का द्योतक है।

इतना ही नहीं मनुष्य अपने कर्म, विशेषता, पेशे के आधार पर भी अपनी पहचान रखता है। वह वैज्ञानिक, कर्मचारी, मैकेनिक, इंजिनियर, डाक्टर, लेखक, कलाकार, वकील अथवा जज यदि स्वयं को कहता है तो निश्चित रुप से वह वो है तब तो कहता है जिसे झुठलाया नही जा सकता। वह अपने कर्म के आधार पर समाज मे अपनी विशेष पहचान के आधार पर जाना जाता है।

धर्म अथवा जाति के आधार पर यदि कोई स्वयं को हिन्दु, मुस्लिम, जाट, ब्राह्मण, वैष्णव, सिक्ख, जैन, बौदि, अथवा क्रिश्चियन कहता है तो भी हम उसे नकार नही सकते क्योंकि ये सब उसकी अपनी पहचान है जो उसे किसी विशेष धर्म, सम्प्रदाय, अथवा जाति से जोड़ती है।

उपरोक्त अनेक दृष्टि से जब मनुष्य की पहचान पर हम नजर डालते है तो वे सभी पहचान उसकी सामाजिक पहचान है। जिन्हे नकारा नहीं जा सकता। समाज मे वे सभी पहचान ही उसकी हकीकत है और इसी हकीकत में आज का मानव जी रहा है। हकीकत ये है, जब मनुष्य के अर्न्तमन में ये सामाजिक पहचान जो वास्तव मे अस्थायी है, स्थान बना लेती है तब ही समाज में विघटन का प्रार्दुभाव होता है। ये सामाजिक पहचान हमारे मे अन्तर डालती है। ये अन्तर सोच के स्तर पर होता है, आय के स्तर पर भी होता है, जीवन शैली के स्तर पर भी होता है। ये अन्तर हमें भिन्न-2 स्तरो पर खड़ा करता है। ऐसे में कोई अपने को चोटी पर खड़ा महसूस करता है तो कोई गहरी खाई में खुद को देखता है। कोई चोटी तक जाने के लिए प्रयासरत होता है तो कोई नीचे खींचने की प्रवृत्ति में प्रवृत्त होता है। अर्न्तमन में ऊँच, नीच के इस भाव को जन्म देने में ये हमारी सामाजिक पहचान

कई बार कारण बनती है। यही कारण कई बार समाज मे अनेक प्रकार के विद्रोह को जन्म देकर व्यवस्थाओं को प्रभावित करता है। जिसका हमारे मूल ग्रह पृथ्वी पर असर जाता है।

कई बार यही सामाजिक पहचान ग्रह युद्ध को जन्म देती, तो कई बार राष्ट्रीय पहचान परमाणु युद्ध का भी कारण बन उठती, अहंकार अथवा असमानता को जन्म देने के निमित्त बनने वाली ये सभी पहचान समाज की हकीकत होते हुए भी हमारी मूल पहचान नहीं हो सकती। यही कारण रहे, लोग सोचने को, जानने को विवष हुए। आखिर मै कौन? ये मैं कौन का अपने आप से प्रश्न उठाने वाले लोग अपनी सामाजिक पहचान से सन्तुष्ट नही थे। वे जानते थे कि हमारी मूल पहचान सामाजिक पहचान से भिन्न है। सभी सामाजिक पहचान तो इस शरीर के साथ नष्ट हो जाती है अथवा समाज मे हमारे परिवर्तन के साथ-2 वे भी परिवर्तन होती है, निश्चित ही हमारी मूल पहचान नहीं हो सकती।

इस पृथ्वी लोक पर सभी मानवो की मूल पहचान एक ही है। इसी मूल पहचान की खोज हमें हमारे उस अस्तित्व के साथ जोड़ती है जो इस शरीर से पहले भी था। शरीर के होने पर भी है और शरीर के अन्त होने पर भी है। यही वह अस्त्तिव है जिसे धर्म साहित्य आत्मा कहकर सम्बोधित करता है। इसी आत्मा के सन्दर्भ मे कहा गया है, यह आत्मा शरीर के जलने पर भी न जलता है अर्थात यह आत्मा न जन्मता है, न मरता है। यह अजर है अमर है अविनाशी है। इसे आग जला नही सकती, पानी डुबो नहीं सकता हथियार काट नही सकता। स्पष्ट होता है हमारा मूल अस्तित्व आत्मा के रुप मे है। यह आत्मा ही शरीर को धारण कर शरीर द्वारा लिंग, धर्म, राष्ट्र अथवा अन्य सामाजिक पहचान के आधार पर समाज में जाना जाता है। मूलतः हम आत्मा है और यही हर मनुष्य की मूल पहचान है। अतः हमारी मूल पहचान आत्मिक पहचान है।

पृथ्वी ग्रह से प्यार करने वाले वे लोग अति महान है जो अपनी इसी मूल पहचान आत्मिक पहचान मे जीते है। उनके द्वारा अपना गाया यह सामान्य सिद्धांत कि ''हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे'' इस भूलोक को स्वर्ग बनाने की प्रक्रिया मे उठाया गया महत्तव पूर्ण कदम है। विश्व भर में तरह तरह के स्तर की विभिन्नताओ के बीच में भी जीने वाला वह मानव जो इस सिद्धांत के साथ जीवन जीता है वह समाज मे अन्तर की खाई को पाटता है। वह अपनी इस जीवन शैली से हर किसी को अपने समान, अपने साथ समान रुप से खडे होने का वातावरण देता है ऐसे मे व्यक्ति को सम्मान पूर्ण जीवन की अनुभूति होती है। ये सुखद अनुभूति का अहसास हर व्यक्ति को एक दो के साथ जोड़ता है। यह जोड़ भारत की पुरातन सनातन संस्कृति का समाज मे संवाहक है जो वसधैव कुटुम्बकम की दृष्टि को मजबूत करता है।

ऐसे में यह सिद्धांत ''हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे'' संसार भर मे रह रहे लोगों के आगे वह आईना है जो विश्व की समास्यओ से उपर उठने का उन्हे हल देता है। यह सिद्धांत ही इस प्यारे पृथ्वी ग्रह की पुकार ''मेक मी हेविन'' को सुनने समझने की हमें शक्ति देता है। यही वह सिद्धांत है जो इस ग्रह को स्वर्ग बनाने मे इच्छुक लोगो की शक्तियों को जाग्रत करने में

मदद देता है। इस सिद्धांत का अनुसरण करने वाले लोग ही पृथ्वी ग्रह को स्वर्ग बनाने मे प्रयासरत होते है और सच्चे दिल से किये गये उनके प्रयास ही धरती मां की पुकार ''मेक मी हेविन'' को पूरा कर मां के आर्शिवाद को प्राप्त करने का पात्र बनाते है।

आत्मा की संरचना

आप आत्मा है यह बताने में सबसे सहज है। हम आत्मा है यह कहने में पहले से कुछ मुश्किल है क्योंकि जब हम यह कह रहे होते है तब हम भाषण नहीं कर रहे होते बल्कि किसी के साथ होते है। ऐसे में सामने वाला हमें करीब से देखता है। आत्मा होकर जीना यही आत्मा होने का यथार्त है। यदि हम आत्मा होकर नहीं जीते तो यह जानने का कोई अर्थ नहीं रह जाता कि हम आत्मा है। आत्मा होकर जीना सहज सम्भव तब होता है जब हम आत्मा के यथार्त को समझते है।

आत्मा के जब अस्तित्व की बात आती है तो कहने में आता है आत्मा सूक्ष्म है, प्रकाशमय है, ज्योति रुप बिन्दू स्वरुप है। आत्मा का अपना स्वयं का शरीर सूक्ष्म है। अब कोई चीज कितनी भी सूक्ष्म क्यों न हो हर चीज की अपनी संरचना होती है। संरचना है तब ही उसका अस्तित्व है । संरचना को जानना, उसके अवयवो को जानना उनकी कार्य प्रणाली को जानना, समाज संसार का उससे हित साधना तब हम कहेंगे किसी चीज को जानना और उसका उपयोगी सिद्ध होना। जिस प्रकार से अणु अति सूक्ष्म होता है। सूक्ष्म होते भी वैज्ञानिको ने उसकी संरचना को जाना। जानने के बाद ही वे उसे कल्याणकारी बना पाये। ठीक इसी प्रकार मात्र यह जानने से कि हम/मैं आत्मा हूँ आत्मा को जानने की प्रक्रिया पूरी नहीं होती।

अतः आओ जाने हम आत्मा की संरचना को। आत्मा एक अति सूक्ष्म बिन्दु ज्योति रुप है। वह अपने अनादि रुप मे अपने मूल गुणो से सम्पन्न है। जिस प्रकार एक अणु में इलैक्ट्रान, न्यूकिलियस के चारो ओर अपनी-अपनी कक्षाओं मे घूमते है। ऐसे ही आत्मा के मूल गुण, शांति, शक्ति, प्रेम, पवित्रता, आनन्द, सुख, गुण व ज्ञान अपनी-अपनी कक्षाओं में आत्मा में निहित है। इन गुणो को लोक कल्याण अथवा स्व कल्याण में उपयोग में लाने के लिए आत्मा में अर्न्तनिहित एक व्यवस्था है। मूल गुणों के कक्षाओ के बाहरी कक्षाओ में क्रमशः अन्दर से बाहर की ओर बुद्धि, मन व संस्कार की कक्षाए है

इस प्रकार एक सम्पूर्ण आत्मा में बिन्दु के चारो ओर उसके मूल गुणो की कक्षाए व तत्पश्चात उसकी कार्य प्रणाली मे सहायक अवयवो बुद्धि, मन व संस्कार की कक्षाए है। आत्मा अपने बुद्धि रुपी अवयव द्वारा ग्राहय अथवा अग्राहय का निर्णय कर उसे मूल गुणो को स्थानांतरित करता है अथवा मूल गुणो से मन की कक्षा की ओर ट्रांस्फर करता है। मन आत्मा की संकल्प शक्ति है। मन रुपी अवयव के द्वारा आत्मा विचार उत्पन्न करता है ये विचार उसकी परस्पर कक्षाओ से प्रभावित होते है। यदि संस्कारो मे द्वियता है तो विचार भी द्विय होते है अथवा संस्कारो में विपरीत

प्रभाव होने पर संकल्प भी नकारात्मक उठने मे सहज होते है। ये विचार बुद्धि के शक्तिशाली होने पर आत्मा के सजग होने पर आत्मा के मूल गुणो के प्रभावो से प्रभावित हो सकारात्मकता लिये होते है। ये संकल्प ही मन को निर्मल, निर्बल अथवा सशक्त जैसे विशेषणो को प्राप्त कराता है।

आत्मा की इन कक्षाओ में संस्कारो की कक्षा अति महत्तपूर्ण कक्षा है। यह कक्षा आत्मा की स्थिति का आइना है। इस कक्षा के आधार पर आत्मा को महात्मा, देवात्मा, पुण्यात्मा, पापात्मा, शुद्ध आत्मा आदि की संज्ञा दी जाती है। आत्मा द्वारा स्थूल शरीर अथवा सूक्ष्म शरीर द्वारा किये गये सभी कर्मो का प्रभाव यूं तो आत्मा के सभी कक्षाओ को प्रभावित करता है फिर भी उनका मूल प्रभाव संस्कारो की कक्षा पर पड़ता है।

आत्मा की इस प्रकार कि सहज संरचना एवं जटिल कार्य विधि को जाने-समझे बिना न तो हम आत्मा होने का अनुभव कर सकते है। न ही आत्मा के पिता परमात्मा से मिलने की शक्ति अर्जित कर सकते है और न ही धरती मां की पुकार ‘‘मेक मी हेविन’’ को पूरा करने का साहस जुटा सकते है। आत्मा की संरचना को समझ कर ही हम आत्मिक शाक्तियों के प्रयोग कर सकते है इस प्रकार आत्मा की संरचना को समझ जीवन जीने वाले लोग ही सच्चे अर्थो मे इस सिद्धांत ‘‘हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे ’’ का अनुसरण करने की स्थिति में होते है। वे ही सच्चे अर्थो में युग पुरुष होते हैं।

आत्मा के मूल गुण

जिस प्रकार स्थूल शरीर के निर्माण में अरबो सेल्स का महत्तवपूर्ण योगदान है। ये सेल्स परिवर्तित होते रहते है। निश्चित समयावधि मे इनका परिवर्तन स्वस्थ शरीर का संकेत देता है। कुछ इसी भाँति कल्प के 5000 वर्ष के चक्र में आत्मा मे निहित कक्षाओ में उसके मूल गुणों के सेल्स भी परिवर्तित होते है। सृष्टि की आदि में अर्थात कल्प के प्रारम्भ के समय सतयुग काल में जब आत्मा अपने मूल घर परमधाम से शरीर मे प्रवेश करती है उस समय आत्मा के मूल गुण(शांति, शक्ति, प्रेम, पवित्रता, आनन्द, सुख, गुण और ज्ञान) अपनी पूर्णता में होते है। आत्मा इन्ही मूल गुणों के प्रमाण अपनी सूक्ष्म शक्तियों, बुद्धि, मन व संस्कार के अनुरुप शरीर के माध्यम से उत्तम पार्ट बजाती है। अपने दैवी स्वभाव, रमणीकव्यवहार, सुखद जीवन के कारण ही वह देव आत्मा कहलाती है।

ये मूल गुण किसी भी आत्मा की आध्यात्मिक सम्पत्ति है। ये मूल गुण ही आत्मा की ऊर्जा का अनन्त साधन है। इन्ही मूल गुणों के अनुरुप ही आत्मा के केन्द्र में भाव एवं भावना की उतपत्ति है। इन मूल गुणों की कक्षाओ मे उपस्थित सेल्स ही बाह्य धटनाओ के प्रति आत्मा में दृष्टि कोण उत्तपन्न करते है।

मनुष्य का व्यवहार एवं व्यवस्थाए इन मूल गुणों के प्रभाव से संचालित होते है। यदि हम धनवान अथवा गुणवान है तो भी यह आत्मा में मूल गुणों की प्रधानता ही के कारण है। आज मेडिकल सांईस रिसर्च के आधार पर इस नतीजे पर पहुँची है कि मनुष्य को स्वस्थ रखने में इन मूल गुणों की महती भूमिका है। प्रयोगो से परिणाम सामने आये है कि आत्मा मे इन मूल गुणों की बृद्धि कर हम अपने स्वास्थय में बृद्धि कर सकते है। ऐसे प्रयोगो के लिए ग्लोबल हॉस्पीटल एंड रिसर्च सेन्टर माउण्ट आबू द्वारा चलाया गया कैड प्रोजेक्ट प्रत्यक्ष उदाहरण है। जिसके माध्यम से हजारो हृदय रोगियो ने अपने आपको बिना सर्जरी अथवा एन्जीयोप्लास्टी के ठीक किया है।

आत्मा मे निहित ये मूल गुण ही ईश्वर पुत्रों एवं धरती पुत्रों को वह उर्जा प्रदान करते है जिस ऊर्जा के आधार पर ही वे धरती मां की पुकार ‘‘मेक मी हेविन’’ को पूरा करने का जज्बा जुटाते है। जीवन का यह सामान्य सा सिद्धांत ‘‘हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे’’ तभी पूर्णता को पाता है जब हर मनुष्य अपने इन्ही मूल गुणों के आधार पर अपने कर्मो का सम्पादन करता है। इन मूल गुणों के आधार पर सम्पादित श्रेष्ठ कर्म ही धरती को उसका खोया हुआ स्वरुप (स्वर्गिक स्वरुप) प्राप्त कराते है। एक ऐसा स्वरुप जहाँ धरती पर रहने वाले मनुष्य द्वियता से सम्पन्न प्रभामण्डल वाले होते हैं। उनकी यह आभा का द्विय प्रकाश सदा अनवरत चहुँ ओर फैलता रहता है। वातावरण में सामुहिक रुप से फैला हुआ यह द्विय प्रकाश परस्पर मनुष्यों एवं प्रकृति को सहयोग प्रदान करता है। वर्तमान में योगिक -जैविक खेती इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। ऐसे में इन देवो का प्रकाश ग्रहण कर प्रकृति भी मनोहारी, सुखकारी स्वरुप को प्राप्त हो धरती को स्वर्ग की संज्ञा दिलाती है। धरती लोक पर सौन्दर्य, सुख, शांति, समृद्धि एवं अपनत्व की इसी पराकाष्ठा के कारण इस युग को सतयुग कहा जाता है। प्रकृति एवं मानव आत्माओ के बीच परस्पर सौहार्द के निमित्त ये आत्मा के मूल गुण ही है।

अपने इन मूल गुणों के आधार पर जीवन जीने वाले अनेक लोग आज भी इस भूमण्डल पर है। ऐसे लोगो के सन्दर्भ में ही यह बात कही जाती है कि आज के कलुषित माहौल में भी धरती ऐसी मूल्यों से सम्पन्न महान आत्माओ के बल पर टिकी हुई है। इस भूलोक पर आज भी ऐसे महान लोगो के फलस्वरुप अनेक परिवार, संगठन अथवा संस्थाए मूल्यों से सम्पन्न होने का माडल है। ऐसे ही संगठनो में एक संगठन प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय अपनी मूल्यों से सम्पन्न कार्य प्रणाली एवं मूल गुणों से युक्त व्यवहार ही के करण पूरे विश्व में एक खुशनु:मा माहौल, सदभाव पूर्ण व्यवहार उत्तपन्न करने के कारण जगत प्रसिद्ध है।

यदि हम धर्म के मर्म को भी समझे तो उसकी जडों में भी ये आत्मा के मूल गुण ही है। आत्मा की जो सत्यता है अपनी उसी सत्यता के आधार पर, सम्पूर्णता के आधार पर परमेश्वर ने आदि सनातन देवी देवता धर्म की स्थापना की जो सनातन धर्म वा कालान्तर में हिन्दु धर्म कहलाया। इस धर्म के प्रथम पुरुष श्री कृष्ण अपनी आत्मा मे सर्व गुणों की पूर्णता एवं प्रधानता के कारण ही सर्वगुण सम्पन्न कहलाये, वैकुण्ठ वासी कहलाये। यदि हम इस्लाम धर्म को भी ले तो इस

धर्म के स्थापक इब्राहिम जी ने मानवता को शांति का सन्देश दिया। अमन चैन का यह सन्देश लोगो को उनके समीप लाया। इसी अमन चैन की दुनिया को इस्लाम धर्म में जन्नत की संज्ञा दी गई।

ईसामसीह ने लोगो को प्रेम से जीना सिखाया। यही प्रेम क्रिश्चीयन धर्म का संवाहक बना और यही प्रेम की संस्कृति भूलोक के लगभग आधे भू-भाग पर अपना साम्राज्य स्थापित करने में कामयाब रही। महात्मा बुद्ध ने लोगो को दया के साथ जीना सिखाया, उन्होने मानवता को करुणा का पाठ पढ़ाया। उन्होने लोगो के दुःख दर्द को अनुभव कर हर मानव की पीड़ा को हरना सिखाया। जिन लोगो ने उनके सन्देश को आत्म सात किया व बौद्धि कहलाये। इस प्रकार भूलोक पर बौद्ध धर्म की स्थापना हुई। चाहे धर्म हो, मठ हो, पंथ-सम्प्रदाय हो सभी की स्थापना मे आत्मा के मूल गुणों का महत्तवपूर्ण पार्ट रहा है।

किसी भी व्यक्ति, राष्ट्र व समाज के विकास में इन्ही गुणों की महत्तवपूर्ण भूमिका होती है। अहिसां के मूल मन्त्र ने भारत को स्वाधीनता दिलाई। कर्मठता के मूल मन्त्रों ने जापान को उपर उठाया। स्नेह/प्रेम के गुण ने यूरोपियन देशो को काफी हद तक मिलाया। जब कोई व्यक्ति, समाज ,संगठन वा राष्ट्र समस्याओ से जूझ रहा होता है ऐसे में आत्मा के मूल गुणों को प्रयोग कर जो लोग समाधान ढूढ़ते है उनके प्रयास कारगर सिद्ध होते है। वे समस्याओ के कारणो को समझ आत्मा के मूल गुणों को प्रयोग करते हुए कारण का निवारण करते है।

समस्याओ के समय मूल गुणों के प्रयोग से हल ढूढने वाले लोग ऊर्जा के ह्रास से बच जाते है। साधनो की एवं मानव जीवन की हानि से बच जाते है। इस प्रकार सुरक्षित संसाधन व संचित ऊर्जा का उपयोग वे विकास के लिए करते है। इस प्रकार जीवन के इस सामान्य सिद्धांत ''हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे'' का पालन करने वाले लोग स्व आत्मा के मूल गुणों का प्रयोग करते हुए इस लोक पर ऐसी गतिविधियां संचालित करते है जिनसे मानव सभ्यता दैवी सभ्यता की ओर अग्रसर हो इस सिद्धांत के अनुसरण का फल पृथ्वी की पुकार ''मेक मी हेविन'' को पूरा करती है। इस सिद्धांत का पालन करने वाले लोग स्व आत्मा में 5000 वर्ष तक के लिए ऐसी आध्यात्मिक ऊर्जा का संचय करते है कि यह ऊर्जा मनुष्य के पार्ट को जन्म-जन्म कल्याणमयी, आनन्दमयी बना देती है। यह ऊर्जा मनुष्य को अनवरत क्रियाशील बनाये सुख, शांति, समृद्धि को प्राप्त कराती है।

आत्मा की कार्य प्रणाली

(Working System of the soul)

आत्मा एक अति सूक्ष्म ज्योति बिन्दु है। अव्यक्त होते हुए भी कर्ता है। आखों द्वारा देखने वाला, कानो द्वारा सुनने वाला, मुख द्वारा बोलने बाला अथवा अन्य कर्म इन्द्रियों द्वारा कर्म करने वाला आत्मा ही है। इसी सन्दर्भ में कहा जाता है, आत्मा अपने ही कर्मो का फल प्राप्त करता है। यह

फल कर्म गति के सिद्धांत के अनुसार उसे सुख अथवा दुःख के रुप में प्राप्त होता है अतः कोई भी कर्म करने से पूर्व यह आवश्यक हो जाता है कि आत्मा मालिक बन कर कर्म करे। यदि कर्म इन्द्रियो के वशीभूत हो आत्मा ने कर्म किये तो निश्चित ही उनका परिणाम दुखजन्य होगा।

शरीर में भृकुटी मे स्थित यह आत्मा ज्योति बिन्दु सितारा जब स्व के स्वरुप की अनुभूति में स्थित होता है तब यह मालिक पन की अथार्टी से स्वयं के कार्यो को संचालित करने की स्थिति में होता है। ऐसी अवस्था में आत्मा कर्म की क्रिया, कर्म के विस्तार व कर्मफल से अनासक्त हो कर्म में प्रवत्त होता है। इस प्रकार आत्मा द्वारा संपादित कर्म आनंददायी व सुखदायी होते है। गीता मे वर्णित कर्मयोग को कर्मो में कुशलता का माध्यम माना गया है। कर्म योग की अवस्था में आत्मा स्व की अनुभूति के साथ-साथ परमपिता परमेश्वर को उसके घर परमधाम में देखता है तथा परमेश्वर से स्वयं में ऊर्जा ग्रहण करता है। इस योग युक्त अवस्था में जब आत्मा कर्म करता है तो इन कर्मो का कर्ता होते हुए भी इनका श्रेय परमात्मा को देता है। उसकी यह भावना कि करनकरावनहार परमात्मा है मै तो निमित्त मात्र हूँ उसे अहंकार शून्य करती है। अतः उसके द्वारा किये गये कर्म उसे जन प्रिय बनाते है। उसके द्वारा मानव जाति के कल्याण में हुए कर्म उसे प्रभुप्रिय बनाते है। समाज में आध्यात्म की वृद्धि करने वाले कर्म उसे स्वयं का प्रिय बनाते है।

मनुष्य के कर्म समाज मे सन्तुष्टता का वातावरण विकसित करे, विकास की धारा को तेज करे, स्वतन्त्रता का माहौल बनाये, सभी के लिए अवसरो का द्वार खोले, इसके लिए आम सर्व जन समुदाय को व खास उन लागों को आत्मा में स्थित हो कर्म करने की आवश्यकता है जो जिम्मेवार है। चाहे उनका कार्य क्षेत्र जो भी हो। आत्मा शरीर के माध्यम से कर्मो को पूर्णता देती है। कुछ भी करने के लिए ऊर्जा की खपत होती है। शरीर यह ऊर्जा भोजन से ग्रहण करता है। आत्मा यह ऊर्जा या तो स्वयं में से लेता है अथवा परमपिता परमात्मा से प्राप्त करता है। आत्मा के इस ऊर्जा लेने की प्रक्रिया मे कई बार उसकी स्वयं की ऊर्जा घटती है और कई बार बढ़ती है। इस ऊर्जा के घटने व बढ़ने में मुख्यः भाव व भावना काम करती है। यह भाव और भावना आत्मा के केन्द्र मे अपनी जगह बनाये हुए है। मनुष्य द्वारा संपादित कोई भी कर्म उसकी भाव व भावना से जुड़ा होता है यदि भाव व भावना शुभ है तो कर्म शुभ फलदायी बन जाता है और ऐसे कर्म आत्मा में ऊर्जा की बृद्धि का आधार बन जाते है। अन्यथा इसके विपरीत जहां मूल्यों का ह्रास होता है और ऊर्जा की कमी।

जब हम आत्मा की संरचना को देखते है तो उनके परस्पर सम्बन्ध, एक दो का एक दो पर प्रभाव, उनकी परस्पर सूक्ष्म क्रियाए जानने व अनुभव करने का दृश्य बड़ा ही मनोरंजनकारी व ज्ञान दायी होता है। अति सूक्ष्म बिन्दु कहलाने वाला आत्मा भी अपने अस्तित्व मे केन्द्र बनाये हुए है। एक ऐसा केन्द्र जिसके चारो ओर मूल गुणों की कक्षाए है तथा मूल गुणो के पश्चात क्रमशः अन्दर से बाहर की ओर बुद्धि, मन व संस्कार की कक्षाए है। केन्द्र में मूल गुणों के कक्षाओ मे उपस्थित सेल्स का सार जैसे केन्द्र में भाव व भावना के रुप मे उपस्थित है। यूं तो आत्मा का हर अवयव किसी भी क्रिया को शुरु करने में पूर्णतः स्वतन्त्र है फिर भी आत्मा अधिकांशतः बाह्य दृष्यो, घटनाओ अथवा अपने संस्कारो की कक्षा से ही अपने कर्मो का सम्पादन करती है ऐसे में उसके मूल गुण क्रियाशील

नहीं हो पाते। इस प्रक्रिया में हमारे कर्म मूल गुणों से प्रभावित न हो पाने के करण उस क्वालिटी के नही होते कि वे गुणो का प्रभाव समाज वातावरण मे तुरंत छोड़े। इस प्रकार के कर्म आत्मा द्वारा उसकी दैनिक दिनचर्या मे जैसे कि स्वभावतः सहज ही सम्पादित होते रहते है ऐसे कर्मो में मन व बुद्धि की कक्षाए भी आंशिक तौर पर ही क्रिया शील रहती है। जब हम विशेषतः कुछ करना चाहते है तो उसमे दो बाते खास काम करती है। कई कार ये कार्य बुद्धि के स्तर पर किये जाते है। ऐसे कार्यो में बुद्धि की कक्षा पूर्णतः क्रियाशील होकर कर्म के अनुरुप मूल गुणो की कक्षाओ मे से तदअनुरुप कक्षा को क्रियाशील बनाती है तथा उस गुण की ऊर्जा को संकल्प शक्ति के माध्यम से व विजन की पावर से इच्छित परिणाम को प्राप्त करती है। दूसरी स्थिति में कर्म के पीछे भाव व भावना जुड़ी होती है। ऐसे कर्म जो भाव व भावना से जुड़े होते है वे अति शीध्र सम्पादित होते हैं वे कम से कम समय व कम से कम ऊर्जा की खपत से ही पूर्णरुप ले लेते है। भाव व भावना जो आत्मा के केन्द्र मे समायी है, यह केन्द्र आत्मा की ऊर्जा का अनंन्त भण्डार स्वयं में समेटे हुए है।

किसी भी कर्म से पूर्व जब उसकी शुरुआत इस केन्द्र में समाई भाव व भावना से होती है तो निश्चित ही वह कर्म ऊर्जा के अनन्त भण्डार से जुडा होता है। आत्मा के केन्द्र से उठे भाव अथवा भावना की सूक्ष्म तरंग आत्मा के मूल गुणों की कक्षाओ को तरंगित करती हुई बुद्धि के कक्षा मे प्रवेश करती है। जहां उन तरंगो का ज्ञान कोषो द्वारा अवशोषण अथवा प्रकीर्णन होता है। इसी बुद्धि की कक्षा में आत्मा में यह निर्णय होता है कि ये भाव अथवा भावना जो एक कर्म का सन्देश लेकर आई है उसका सम्पादन होना है अथवा नहीं। ज्ञान के आधार पर बुद्धि बल यदि उस कर्म पर अंकुश लगाता है तो वह भाव अथवा भावना की तरंग इस बुद्धि के कक्ष मे विलीन हो शांत हो जाती है। यदि बुद्धि बल उस कर्म के सम्पादन का निर्णय लेता है तो यह भाव/भावना की तरंग मनः प्रदेश में प्रवेश कर उस अनुरुप संकल्पों को जन्म देती है, ये संकल्प आत्मा के हर अवयव को एक्टीवेट कर उस कर्म को पूर्णताः प्राप्त कराते है।

जिस प्रकार भाव अथवा भावना कर्मो का कारण बनते है ठीक इसी प्रकार मन की कक्षा में उपजे संकल्प अथवा बुद्धि की कक्षा मे आये विजन भी कर्मो का करण बनते है। कई बार हमारे मूल गुणों में से विशेष किसी कक्षा में स्थापित गुण एक्टीवेट होकर स्वयं से तरंगे उत्तपन करते है और ये तरंगे आत्मा के अवयवो, शरीर के अंगो, तथा वातावरण में अपनी उपस्थिति की महसूसता कराते हैं। आत्मा मे उपस्थित अपनी अपनी कक्षाओ में स्थित ये आलौकिक सेल्स जिस प्रकार स्वतः एक्टीवेट हो आत्मा के सपन्दन मस्तिष्क को प्रसारित करते है तथा मस्तिक से न्यूरोकेमिकल्स के रुप मे कर्म इन्द्रियों को निश्चित कर्म के लिए सन्देश देते है। इस स्वतः स्पन्दन की क्रिया में आत्मा शरीर का मालिक होते हुए भी मालिक की तरह कार्य नहीं करता। यह आत्मा की ऐसी स्थिति होती है जिस तरह से कई बार मनुष्य कहता है मैं चाहता नही था लेकिन हो गया। कई बार सुनने में आता है मेरा भाव यह नहीं था कृप्या आप अन्यथा न ले। कई बार व्यक्ति कहता है आप मेरी भावना को समझे आदि आदि। यह स्थिति आत्म नियन्त्रण की स्थिति नहीं है। यदि व्यक्ति इस स्थिति मे

जीता है, भल वह आत्मा है तो भी यह नही कहा जा सकता कि वह जीवन के इस सामान्य सिद्धांत ''हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे'' का अनुसरण कर रहा है।

इस सिद्धांत के अनुसरण की स्थिति तब बनती है जब व्यक्ति स्वयं के आत्म रुप में स्थित हो, ज्ञान बल, योगबल व बुद्धि बल के आधार से आत्मा की कक्षाओ के अवयवो को संचालित करता है। जब वह आत्मा निश्चित लक्ष्यो की पूर्ति के लिए कक्षाओ में स्थित सेल्स को लक्ष्य के अनुरुप स्पंदित करता है और अपेक्षित परिणाम प्राप्त करता है। ऐसी स्थिति मे ही वह आत्मनिष्ठ हुआ व्यक्ति स्वयं को शरीर का मालिक होने का अनुभव करता है। ऐसा अनुभवी व्यक्ति ही धरती मां की पुकार ''मेक मी हेविन'' को पूरा करने का विजन रखता है। वह इस विजन की पूर्णता को समझते हुए आत्मा की सूक्ष्म शक्तियो को प्रयोग मे लाता है। इस प्रकार वह अलौकिक शक्तियो के प्रयोग से धरा पर परमात्मा पिता के अलौकिक कर्तव्य मे मददगार बन धरती को इसका खोया हुआ स्वर्गिक स्वरुप प्रदान कराता है। वह आत्मा की कार्य प्रणाली को समझते हुए उसका समुचित ढ़ग से संचालन कर आत्मा की शक्ति को जगत में प्रसिद्ध करता है।

राजयोग मेडिटेशन

आत्मा जो निरन्तर क्रियाशील है, इस क्रियाशीलता में वह या तो स्व की सपन्दा अथवा उर्जा का ह्रास करता है अथवा इस क्रियाशीलता को भी ऊर्जा अथवा सम्पदा प्राप्त करने का आधार बना लेता है। स्व आत्मा में अलौकिक सम्पदा अथवा अव्यक्त ऊर्जा को ग्रहण करने का तौर तरीका राजयोग मेडिटेशन कहलाता है। यह तरीका लगभग इसी तरह का है जिस प्रकार हम विद्युत सप्लाई के साथ अपने मोबाईल को चार्ज करते हैं और चार्ज होने पर उसको उपयोग के लिए तैयार पाते है। आत्मा के सन्दर्भ में हम स्व स्वरुप, आत्मा स्वरुप में स्थित हो स्वयं को परमपिता परमात्मा के साथ कनेक्ट करते है तथा उनके वायब्रेशन से स्व आत्मा को चार्ज करते है अथवा हम आत्मा में स्थित हो किसी ऐसे सोर्स के साथ आत्मा का सम्बन्ध जोड़ते है जो सोर्स हम आत्माओं मे सतोगुण की वृद्धि करने वाला हो। आत्मा का सतोगुणी स्वरूप को प्राप्त होना अर्थात आत्मा का चार्ज होना। आत्मा का तमोगुणी होना अर्थात आत्मा की श्रेष्ठ कर्म करने की पावर डिस्चार्ज होना। तमोप्रधानता की अवस्था में आत्मा के कर्म अस्त-वयस्त, निकृष्ट, दुःखदायी अव्यव्स्था उत्तपन्न करने वाला स्व व अन्य के लिए परेशानियां पैदा करने वाला होता है। जबकि सतोप्रधानता की अवस्था में आत्मा का कर्म श्रेष्ठ, सुखदायी, आनन्दकारी, कल्याणकारी एंव व्यवस्थाओं को बेहतर बनाने वाला होता है। इस सन्दर्भ में आवश्यक हो जाता है कि धरा पर स्वर्ग को साकार करने के लिए हर मानव आत्मा को स्व की आत्मा रुपी बैट्री को राजयोग मेडीटेशन से चार्ज कर स्वयं को सतोप्रधान अवस्था में लाये।

सतयुग से लेकर कलियुग अन्त तक के इस चक्र को जो 5000 वर्ष में पूरा होता है एक कल्प कहा जाता है। इस कल्प में युगो के अनुरुप आत्मा की अवस्था भी सतोप्रधान, सतो, रजो व

तमो अवस्था को प्राप्त होती है। आत्मा पुर्नजन्म लेता हुआ एक कल्प में अधिकतम 84 जन्मों में पार्ट बजाता है। इस 84 जन्मों में उसे मात्र एक अन्तिम जन्म ही ऐसा प्राप्त होता है जब वह अपनी आत्मा को पूर्णतः अलौकिक सम्पदा अथवा अव्यक्त ऊर्जा से सम्पन्न करने का अवसर प्राप्त करता है। वह विद्या जिसके द्वारा आत्मा को तमोप्रधान से सतोप्रधान बनाता है अथवा यूं कहे स्वं को चार्ज करता है उस विद्या को राजयोग मेडीटेशन कहा जाता है। भिन्न भिन्न तौर तरीको के आधार पर आत्मा को सतोप्रधान बनाने वाले इस राजयोग मेडिटेशन को अन्य नामो से भी जाना जाता है

कर्मयोग- कर्म संसार की नियति है। बिना कर्म के संसार का चक्र, जीवन का चक्र गति मान नही रह सकता। प्रगति मनुष्य की आकंशा के साथ जुड़ी है, इसलिए कहा जाता है जहाँ गति है वहाँ ही प्रगति है। संसार में कई धर्म परायण व्यक्ति कहते है, सब कुछ भगवान करता है यह उनकी भावना है। जबकि यर्थात यह है बिना कर्म के कुछ भी संचालित नहीं है। हां मानव आत्मा कर्म करते हुए यह भाव रखे करनकरावनहार परमात्मा है, मै तो निमित्त मात्र कर्म का कर्ता हूँ। उसके यह भाव उसे परमात्मा के साथ जोड़ते है यही जुड़ाव कर्म योग है। जब आत्मा शरीर द्वारा कर्म करते हुए स्व आत्मा में स्थित हो ईश्वर पिता का गुण गान करता है, उसकी शक्तियो व गुणों को स्वयं मे भर उनसे कार्य संचालित करता है तभी वह कर्म योगी कहलाता है। वह कर्म, फल की आकंशा से ऊपर उठकर करता है। कर्म पूरी लग्न एवं निस्वार्थ भाव से करता है। इसी गुण के कारण उसके कर्मो में कुशलता झलकती है। इसलिए कहा जाता है योगः कर्मशु कौशलम्। राजयोग मेडिटेशन हमें स्वयं को चार्ज करने के अनेक अवसर देता है। इसमें अपनाये गये तौर तरीको का अपने अपने स्थान पर सभी का महत्तव है। अपनी इसी बृहदता के कारण इस सर्व योगो का राजा कहा जाता है। कर्म योगी आत्मा अपने कर्म के फल से स्वयं की जिम्मेवारियों का पालन करते हुए फल में ईश्वर को भी भगीदार बनाता है। वह अपने कर्म फल का कुछ भाग ईश्वर अपर्ण कर, मानव जाति के कल्याण का मार्ग खोलता है।

ज्ञान योग- कल्प के अन्त में आत्माओ को पतित से पावन बनाने के लिए, तमोप्रधान से सतोप्रधान बनाने के लिए ज्योति स्वरुप परम पिता परमात्मा ब्रह्मा तन में अवतरित होते है। आत्माओ को पावन बनाने के लिए वे राजयोग मेडिटेशन की विद्या सिखाते हैं। इस विद्या में मुख्यतः वे ज्ञान व योग के माध्यम से आत्मा को चार्ज करते है। परमात्मा जो ज्ञान के सागर है वे अपने विचारो को ब्रह्मा मुख से शब्दो का रुप देते है। यही शब्द जब व्यक्ति सुनता है तो ये शब्द आत्मा के मनः प्रदेश को प्रभावित करते है। ये ज्ञान युक्त विचार जब आत्मा की बुद्धि स्वीकार करती है तो ज्ञान कक्षा में प्रवेश कर ज्ञान के सेल्स में वृद्धि करते है। इस प्रकार परमपिता परमात्मा से ज्ञान प्राप्त कर आत्मा स्वयं में ज्ञान के कोशो का विकास करती है। यह ज्ञान आत्मा को सृष्टि के आदि मध्य अन्त के राज स्पष्ट करता है। यही ज्ञान उसे स्वयं आत्मा व परमात्मा के सत्य परिचय से अवगत कराता है। यही ज्ञान उसे स्व के जन्मों की जानकारी देता है। जब आत्मा स्व के स्वरुप में स्थित हो परमात्मा से प्राप्त हुए इस अमूल्य ज्ञान का चिन्तन-मनन करता है उसकी यह अवस्था ज्ञान योग के रुप मे जानी जाती है। इस अवस्था में आत्मा होली हंस की तरह ज्ञान रत्नो को ग्रहण करता रहता है। इन

ज्ञान रत्नो का आत्मा के ज्ञान कक्षा पर ऐसा प्राभाव पड़ता है कि उसके सम्पर्क में बुद्धि का कोष द्विय ज्ञान के वर्धन से द्वियता को प्राप्त होता है। यह ज्ञान कोष उसे यथार्त निर्णय लेने की स्थिति प्राप्त कराता है। आत्मा के इसी ज्ञान कोष में बृद्धि के कारण मनुष्य ज्ञानवान, समझदार कहलाता है। यही ज्ञान योग का फल है।

बुद्धियोग- बुद्धि को ज्ञान का नेत्र भी कहा जाता है। बुद्धि को तीसरी आँख भी कहा जाता है। बुद्धि को द्विय नेत्र की भी संज्ञा दी जाती है। द्विय बुद्धि के दाता, द्विय चक्षु विधाता स्वयं भगवान है। जब भगवान के वरदाता स्वरुप की बात आती है, तो कई लोग कहते है, मनुष्य अपने ही कर्मो का फल प्राप्त करता है। इसमे भगवान के देने की बात कहाँ। अब सोचने का विषय है भगवान द्विय चक्षु विधाता कैसे है- वे मनुष्य को ज्ञान प्रदान करते है। मनुष्य ही उस ज्ञान से स्व आत्मा को जाग्रत करता है। उसके द्वारा ज्ञान अर्जन कर किया गया अभ्यास आत्मा में ज्ञान कोषो की बृद्धि करता है। यही ज्ञान कोष अपने समीपवर्ती बुद्धि की कक्षा पर अपना प्रभाव छोड़ उसे द्वियता प्राप्त कराते है। ऐसे ही बुद्धि के समीपवर्ती मन की कक्षा में जब यह ज्ञान विचारो में चिन्तन में प्रवेश पाता है तो मन

की हलचल समाप्त होती है। परिणाम स्वरुप परमात्मा के द्विय ज्ञान का प्रभाव मन को निमर्लता प्रदान करता है। बुद्धि की आँख के आगे मन की हलचल न होना अर्थात तीसरी आखं की देखने की क्षमता में बृद्धि होना।, इस प्रकार परमात्मा पिता के द्विय ज्ञान को अर्जन कर आत्मा द्विय चक्षु का वरदान पाता है। यही से बुद्धि योग की शुरुआत होती है। अपने में ऐसे अनेक रहस्य समाये होने के कारण ही यह योग राजयोग मेडिटेशन कहलाता है। यह योग आत्मा को स्वं का राजा बनाता है। इसीलिए इसे राजयोग कहा जाता है। बुद्धि योग में आत्मा का तीसरा नेत्र इतना प्रखर होता है कि वह हड्डी मांस के इस शरीर में स्वयं की चेतना को अपने सत्य स्वरुप में अनुभव करता है।

भृकुटि के मध्य चमकते हुए इस अजब सितारे में अपने घर परमधाम को देखने की स्पष्ट क्षमता होती है। बुद्धि योग के माध्यम से आत्मा स्वयं को अपने परमपिता के अव्यक्त प्रकाश में अनुभव करता है। बुद्धि बल से आत्मा अनुभव करता है कि परमात्मा का द्विय प्रकाश, अलौकिक शक्तियां व ईश्वरीय गुण मुझ आत्मा में समा रहे हैं। बुद्धि योग के माध्यम से आत्मा त्रिकादर्शी स्थिति में स्थित होने के कारण स्वर्ग लोक की दुनियां में रमण करता है। जिसे गीता में मनमना भव की स्थिति कहा जाता है। बुद्धियोग से आत्मा की स्पष्ट विजन देखने की क्षमता बढ़ती है। ऐसा आत्मा अपनी योजनाओ में फल तक झांकने की सामर्थ्य विकसित कर लेता है। स्पष्ट योजनाओ, परिपक्व दृष्टि, सफलता के प्रति निश्चिन्ता का वरदान व्यक्ति को बुद्धियोग द्वारा ही प्राप्त होता है।

बुद्धियोग में योगी के सम्मुख जो आब्जेक्ट होता है, उस आब्जेक्ट के गुण, धर्म, बुद्धि बल का प्रयोग करते हुए स्व आत्मा के मूल गुणो को इमर्ज कर उनसे आब्जेक्ट को भी प्रभावित करने की क्षमता रखता है। बुद्धियोग के माध्यम से योगी अलौकिक सम्पदा अथवा अव्यक्त ऊर्जा को स्वयं में ग्रहण करता है अथवा अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए इनका प्रयोग करता है। ''एज यू सी सो यू बिकम'' के सिद्धांत को बुद्धियोग में हम गहराई से अनुभव करते है। ऐसे योगी की विजन पावर

बहुत स्पष्ट होती है। विजन पावर के आधार पर जब वह योगी अपने लक्ष्यों की तरफ बढ़ता है तो परिणाम उसे निश्चित भावी के रुप में जान पड़ते है ऐसे में वह निरंतर उद्यमशील होते हुए भी निश्चिन्त अवस्था का अनुभव करता है। उसकी एकाग्रता गजब की होती है।

सहजयोग- राजयोग अपने आप में अति सहज है। इस योग के अभ्यासी के लिए आयु, देश, काल, धर्म आदि किसी भी प्रकार का बन्धन नही है। ग्रहस्थ व्यवहार में रहने वाले, विद्यार्थी जीवन में अध्ययन करने वाले, जीवन के कर्म क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के उत्तरदायित्व संभालने वाले सभी लोग राजयोग का सहज अभ्यास कर सकते है। इस योग को करने के लिए किसी प्रकार की हठ क्रियाओ की आवश्यकता नहीं है इसलिए यह योग सहज योग भी कहलाता है।

योग अथवा योगीयो के सन्दर्भ में समाज में ऐसी मान्यता रही है कि योगी बनने के लिए घर परिवार का त्याग कर कन्दराओ, गुफाओ अथवा जंगलो मे जाकर तपस्या करनी पड़ती है। जिन योगीयो ने सन्यास मार्ग को अपनाया, उनके इस मार्ग को अपनाने के कई कारण रहे। उन्होने नारी को नर्क का द्वार माना इसलिए वे ब्रह्मचर्य अथवा पवित्रता के व्रत की पालना के लिए ग्रहस्थ अथवा परिवार का त्याग कर उस वातावरण से दूर चले गये। उन्होने जगत को मिथ्या कहा इसलिए समाज अथवा परिवार जैसी संस्था में उनकी आस्था नही रही। यदि हम धरती को स्वर्ग बनाने की बात करते है तो ऐसे लोगो से कतई उम्मीद नहीं कर सकते जो जगत को मिथ्या मानते हो। उनके प्रयास सदा ही संसार से पलायन के रहे। वे इस शरीर से दूर भागने के प्रयत्नशाील रहे तथा ब्रह्म में समाने के लक्ष्य को लेकर तपस्या में लीन रहे। वस्तुतः योग का मार्ग स्व कल्याण तथा लोक कल्याण का मार्ग है। अपनी इसी विशेषता के कारण यह योग सहजयोग है। ये योग व्यक्ति को समूह में भी पवित्र जीवन जीने की शक्ति देता है इसलिए ये सहज अनुभव होता है।

भक्तियोग- भक्ति भावना प्रधान है। भाव और भावना आत्मा के केन्द्र में समाई है। अगर हम यह कहे भक्ति अन्दर से होती है, भक्ति आत्मा की गहराई से होती है तो शायद उचित ही है। राजयोग में आत्मा परमात्मा को दिल से याद करती है। दिल अन्दर की बात है। दिल का सम्बन्ध प्रेम से भी है इसलिए भक्तियोग में आत्मा प्रेममय होती है। प्रभु के साथ दिल की प्रीत ही भक्ति योग है। भक्ति करना, कर्मकाण्ड करना, मनोकामनाओ की पूर्ति के लिए अनुष्ठान करना व ईश्वर की पूजा अर्चना करना, भक्ति कहलाता है। जबकि भक्तियोग में आत्मा ईश्वर के प्रेम में मग्न होती है। भक्तियोग में आत्मा की दिल की आवाज होती है- ''प्रभु मैं तेरी आप मेरे''। भक्तियोग में ईश्वर के साथ सौदेबाजी, व्यापार अथवा विवषता नहीं है कि भगवान से कुछ पाना है तो भगवान को याद करना ही पड़ेगा। भक्तियोग में तो भक्त का ईश्वर के साथ प्रेम का नाता है। यह प्रेम मात्र प्रभु तक नहीं रहता बल्कि आत्मा जिस तरह ईश्वर से प्रेम करता है उसी भाँति ईश्वर की सन्तान होने के नाते स्वयं से भी प्रेम करता है। भक्तियोग में योगी स्व स्वमान में स्थित हो जैसा सम्मान ईश्वर को देता है वैसा ही सम्मान पूर्ण नजरिया वह स्वयं के प्रति व सर्व के प्रति रखता है। इसी नजरिये के कारण उसकी भक्ति एक दो घण्टे की नहीं बल्कि अखण्ड भक्ति चलती है। ऐसा स्वमान में स्थित हुआ योगी ईश्वर के प्रेम के साथ- साथ जन-जन के प्रेम का भी पात्र बनता है। वह सदा सन्तुष्टता का प्रसाद

बांटता है। उसके निश्छल निर्मल प्रेम की धारा आत्माओ के साथ प्रकृति में भी प्रेम का संचार करती है। ऐसे योगी के प्रकम्पन्न पाकर प्रकृति भी अपने को धन्य महसूस करती है। भिन्न भिन्न तौर तरीको के आधार पर भिन्न भिन्न नामों से जाना जाने वाला यह राजयोग मेडिटेशन जो आत्मा को पूर्णतः सतोप्रधान बनाये परमात्म वर्से का अधिकारी बनाता है, अपनी अनेक विशेषताओ के कारण जगत प्रसिद्ध है।

आत्मा में स्व स्वरुप की अनुभूति करने की शक्ति इसी राजयोग के अभ्यास से आती है। जीवन का यह समान्य सा सिद्धांत कि "हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे" राजयोग का अभ्यास करने वालो के लिए सहज हो जाता है। राजयोग मेडिटेशन के अभ्यासी लोग स्व आत्मा में जो अव्यक्त ऊर्जा भरते हैं वह ऊर्जा उन्हे सशक्त बनाती है। सशक्त लोग ही धरती मां की पुकार "मेक मी हेविन" को पूरा करते है। इसलिए हर मानव को राजयोग मेडिटेशन से स्व आत्मा को ऊर्जावान बनाने पर पूरा ध्यान देने में ही धरती मां की सेवा का अवसर समाया है।

राजयोग बनाये नास्तिक को आस्तिक

संसार में तरह तरह के लोग रहते हैं इनमें से कई आस्तिक कहलाते हैं, कई नास्तिक कहलाये जाते है। यह धरती विभिन्न विचारधारा रखने वाले लोगो का बसेरा है। इसलिए इस धरती से प्यार करना हम सभी का दायित्व है। ऐसे धरती मां की आवाज "मेक मी हेविन" को पूरा करना हम सभी का फर्ज है। जिन्हे भगवान से प्यार है जो भगवान में आस्था रखते है वे तो धरती को भगवान की रचना मानकर इसकी सेवा करते ही हैं। पर वे लोग जिन्हे ईश्वर अथवा आत्मा की सत्ता मे विश्वास ही नही है। वे लोग भी अपने इस प्यारे पृथ्वी ग्रह से प्यार करते है। उनके इसी गुण के कारण परमपिता परमात्मा ने राजयोग मेडिटेशन में सेवा भाव को भी आत्मा के ऊर्जा बृद्धि का साधन बनाया।

राजयोग मेडिटेशन मुख्यतः चार क्षेत्रो के द्वारा आत्मा में अलौकिक सम्पदा व अव्यक्त ऊर्जा में बृद्धि का उपाय दर्शाता है। जो लोग ज्ञान व योग के क्षेत्र से इस मार्ग में प्रवेश नही करना चाहते ऐसे लोगो के लिए भी भगवान ने कल्याण का मार्ग दिखाया है। भल आत्मा ईश्वर को अपना पिता न भी माने अथवा उसकी सत्ता को स्वीकार न करे तो भी परमात्मा के लिए तो हम सब उसके बच्चे ही है। यदि कोई मनुष्य स्वयं को आत्मा न भी माने तो भी वह आत्मा तो है ही। ऐसी स्थितियों में ईश्वर ने राजयोग मेडिटेशन में द्विय गुणो की धारणा व सेवा भाव को ऐसे लोगो की उन्नति का आधार बनाया है। वह व्यक्ति जो इस संसार में रहता है जिसे इस संसार के अलावा अन्य कहीं कुछ प्रतीत नही होता है निश्चित ही उसका इस संसार से लगाव भी उतना गहरा रहता है। जिस संसार में ऐसे लोग रह रहे है उन्हे अन्य लोग नास्तिक की संज्ञा देते है तो भी वे अपने इस प्यारे

पृथ्वी ग्रह से तो अत्यधिक प्यार करते ही है। यदि वे स्वयं आत्मा अथवा ईश्वर की सत्ता में विश्वास नही रखते है तो इसके पीछे मूल करण है उनकी आत्मा में अलौकिक सम्पदा अथवा अव्यक्त ऊर्जा की अति कमी आ गई है, जिसके अभाव के कारण वे स्वयं को आत्मा नही अनुभव कर पा रहे है। परमपिता क्योंकि हम सबके पिता है ऐसे में यदि कोई मनुष्य अपने इस स्वमान को खो देता है कि वह ईश्वर पुत्र है तो भी परमात्मा परमपिता होने के कारण अपने पुत्र के कल्याण के लिए राजयोग मेडिटेशन में द्विय गुणो की धारणा, व सेवा भाव से उनकी आत्मा में ऊर्जा बृद्धि का साधन उपलब्ध कराते है।

जो व्यक्ति संसार में रह रहा है, वह संसार में अपना पार्ट बेहतर बजाना चाहता है। वह संसार को बेहतर रुप में देखना चाहता है। संसार मे स्वयं की स्थिति व संसार कि स्थिति को बेहतर देखने की अभिलाषा ही सच्चे अर्थो में पृथ्वी ग्रह की आवाज ''मेक मी हेविन'' को सुनना है। जब व्यक्ति स्वयं में द्विय गुणो जैसे कि पवित्रता, शांति, निर्भयता, कर्मठता, सत्कार आदि का विकास करता है तो स्वतः ही उसकी आत्मा में ये गुण अलौकिक सम्पदा के रुप में विद्यमान होते जाते है। इसी भांति जब व्यक्ति संसार की व्यवस्थाओ को बेहतर बनाने के लिए अथवा स्वयं के द्वारा संचालित कार्यो को गुणवत्ता वाला, अच्छे परिणाम देने वाला बनाने के लिए प्रयत्नशील रहता है तो उसके ये कार्य उसमें सेवा भाव विकसित कर देते है। इसी सेवा भाव से जब वह अपने कर्मो का सम्पादन कुछ इस प्रकार करता है कि वह कर्म मानव जाति का हित करे, धरती के वातावरण को सुरक्षा प्रदान करे, परस्पर बेहतर काम करने का वातावरण निर्मित करे, तो ये कर्म उसके लिए दुआओ का मार्ग खोलते है। उसके कर्मो से जड चेतन जिनका भी हित होता है उनके अन्दर से निकली दुआए, शुभ भावनाए उस आत्मा में अव्यक्त ऊर्जा के रुप में जमा हो जाती है। यही अव्यक्त ऊर्जा मनुष्य को उसके स्व अस्तित्व का बोध कराती है। उसे उसकी आत्मा की गहराईयों में ले जाती है और यही चेतना उसके अन्र्तजगत में उसे ईश्वर के अस्त्त्वि का अहसास कराती है।

यदि कुछ है, तो किसी के न कहने से उसका होना समाप्त नहीं हो जाता है इसलिए आवश्यकता है हम स्वयं में वह शक्ति विकसित करें जो हमें उसके होने का अनुभव कराये। यह अनुभव करने की शक्ति राजयोग मेडिटेशन के अभ्यास से व्यक्ति स्वयं में विकसित करता है। ये शक्ति विकसित करने वाला व्यक्ति ही सच्चे अर्थो में जीवन के इस सामान्य सिद्धांत का अनुसरण करता है कि ''हम अपनी मूल आत्मिक पहचान में जियेंगे'' राजयोग के अभ्यास में द्विय गुणो की धारणा व सेवा भाव के माध्यम से भी हम नास्तिक कहलाते हुए भी स्वयं के अस्तित्व तक पहुँचते है और अपने इसी निस्वार्थ सेवा भाव से धरती मां की पुकार ''मेक मी हेविन'' को पूरा कर मां के साथ साथ ईश्वर पिता का भी आर्शीवाद प्राप्त करते हैं।